एक और रिहाना नहीं

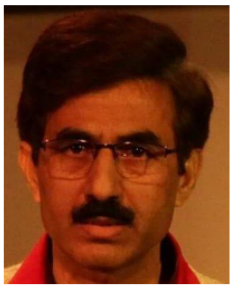

एम हनीफ मदार

एक और रिहाना नहीं

दिन भर की बूँदा-बाँदी शाम को थककर बन्द हुई। हवा वातावरण में हल्की ठण्डक घोलने लगी। रूई के फाहों की तरह भूरे, कुछ हल्के स्लेटी बादल, आसमान के एक छोर पर धीरे-धीरे ऐसे इकट्ठे हो रहे थे मानो आकाश जैसे बड़े कैनवस पर, कोई सुन्दर चित्रकला में रंग भरने की क्रिया कर रहा है। बारिश थमने के बाद से ही मैं छत पर बैठा इस अनोखी कारीगरी को देख रहा था। एकदम शान्त एकाग्र होकर जैसे मैं यह माने बैठा था कि मेरे कुछ बोल पड़ने या गुनगुनाने से आकाश में छपती ये

सुन्दर आकृतियाँ बिगड़ जायेंगी कि अचानक चीख-चिल्लाहट की आवाज से मेरी एकाग्रता भंग हुई।

यह आवाज मेरे पड़ौसी बुन्दू की बड़ी बेटी रिहाना की थी। बुन्दू मेरे घर के ठीक पीछे वाले प्लॉट में बने में एक कमरे में रहता है। मकान मालिक ने उसे खरीदा ही था कि उसे दिल्ली में काम मिल गया इसलिए किराए पर उठाकर चला गया। मैंने छत से झाँककर देखा रिहाना के हाथ आटे से सने हुये थे। आँखों से क्रोध में डूबी खीझ टपक रही थी। उसके मुँह से भद्दी गालियाँ निकल रहीं थीं जो उसके अपने छोटे नौ बहन-भाइयों के लिए थीं जिन्हें वह, कुनबा कह रही थी "दारीकेऔ एकऊ ने आवाज निकारी तौ मौंह तोड़ दूँगी... कुनबा वा बाप ते नाय रोय सकतु जा नरिऐ भरिवे कूँ...? इतनौ कहाँ ते लाऊँ तुमकूँ।" दरअसल यह उसके मन का गुबार अपने उस बाप के लिए था जिसके लिए पारिवारिक तथा सामाजिक सरोकारों का कोई अर्थ नहीं है। उसका दिन शराब की दुकान से शुरु होकर जुआरियों के साथ बैठकर खत्म होता है।

चीखती-चिल्लाती रिहाना, अपने बहन-भाइयों को रोटी तथा तरकारी बाँट कर दे रही थी तब बुन्दू ने घर में प्रवेश किया। उसकी आँखें लाल हो रहीं थीं। वह पूरी तरह शराब के नशे में था। रिहाना की आँखें बच्चों को इतनी रोटी से ही भूख शान्त करने का आदेश दे रहीं थीं ताकि उसके घर की अन्तिम सांसें गिनती आबरू अर्थी में न बदले। मगर बन्दू इतने पर भी शर्मसार तो बिल्कुल भी नहीं था हाँ गौरवान्वित मुद्रा में, मुहम्मद बिन तुगलक जैसी मूँछों पर हाथ फिरा रहा था। इस दृश्य को देखकर जैसे आसमान भी रो पड़ा था। बारिश तेज होन लगी तो मैं भी छत से उतरकर नीचे आ गया। कुछ देर बाद बारिश फिर थमी तो मेरी माँ कुछ रोटियाँ तथा तरकारी रिहाना की बीमार माँ को देने गयी।

रहीमा को टी.बी. की यह बीमारी विरासत में नहीं मिली बल्कि, भूखे पेट पूरा-पूरा दिन मेहनत करना ऊपर से पति द्वारा उसकी इच्छा के विरुद्ध नौ बच्चों को शीघ्रातिशीघ्र जन्म देने का परिणाम है। लोगों से सुनकर वह इतना भी जानती है कि, आज इस बीमारी का इलाज है। लेकिन चालीस रुपये में कॉल्डस्टोर में, जहाँ गर्मियों में भी हाड़ कंपा देने वाली सर्दी होती है में मजदूरी करके वह वर्षों से बच्चों का पेट भरने की कोशिश में ही जुटी रही है। अब ऐसे में उसे अपनी बीमारी का ध्यान ही कहाँ था...। किसी ने बताया था तो एक दो बार सरकारी अस्पताल गयी भी तो वहाँ देने के लिए उसके पास कुछ था नहीं इसलिए उसकी वहाँ सुनने वाला ही कौन था। उसके बाद उसने पति के नकारापन के साथ इस बीमारी को भी भाग्य का लेखा मान लिया

किन्तु, उस पर अपने छोटे बेटे का अपाहिजपन नहीं देखा जाता। जब वह छोटा था तब तेज बुखार में उसे यह शिकायत हुई थी। डाक्टर ने कहा था कि अभी ठीक हो जायेगा। मगर दवाई के लिए पैसे कहाँ जुटा पायी। इसके लिए उसने बुन्दू से भी खूब झगड़ा किया एकाध बार पिटी भी। अन्त में एक दिन बुन्दू ने साफ कह दिया "मर जान्दै भैन के लौड़ाऐ। जादा मरी जाय रई ऐ तौ दूसरौ खसम करि लै।"

"तू मरि तौ जा पहलैं तबई तौ कछु करि लुँगी।" और कुछ न कर सकी बेटा अपाहिज हो गया। आज भी जब रहीमा की नजर अपने बेटे पर जाती है तो कलेजा धक से रह जाता है। इसी से तो उसने बुढ़ापे की उम्मीदें जोड़ीं थीं। बड़े बेटे रज्जाक का सहारा तो उसके लिए पहले ही जाता रहा है। वह अट्ठारह वर्षीय हट्टा-कट्टा जवान है किन्तु रहीमा के लिए यह भी दुर्भाग्य की काली छाया ही है। वह अपने बाप से भी दो कदम आगे है। पक्का कामचोर बाप की तरह ही लड़ झगड़कर माँ की कमाई खा-खाकर खूब फल-फूल रहा है। ऐसे में रहीमा को यह मान लेने में ज्यादा कठिनाई नहीं होती कि रज्जाक के रूप में दूसरा बुन्दू तैयार हो रहा है जैसे इतिहास खुद को दुहराने की तैयारी कर रहा हो।

इन दिनों रहीमा को शारीरिक बीमारियों से ज्यादा उन्नीस वर्षीय रिहाना की शादी की चिंता सता रही है तभी उसकी बीमारी उसको चारपाई से न उठने को मजबूर कर रही है। ऐसे में वह किसका सहारा तलाशे पति का ... पुत्र का...? या स्वयं अपना ...? पति के इन कर्मों के कारण परिवार से भी सम्बन्ध टूटे वर्षों हो गये। इसलिए अब उनका मुँह फेरे रखना उसे कुछ गलत नहीं लगता। अब तक तो उसे भरोसा था कि बेटा सयाना हो जाएगा तो उसकी मुश्किलें कुछ कम हो जायेंगी परन्तु ऐसा भी नहीं हुआ। इसी दिन रात की चिन्ता ने रहीमा की कमर तोड़ कर रख दी। बीमारी ने भी उसके साथ कोई कसर नहीं छोड़ी, आखिर उसने चारपाई पकड़ ही ली। अब न चाहते हुए भी परिवार के पालन-पोषण की पूरी जिम्मेदारी ही रिहाना और अपाहिज पुत्र सलीम पर आ गई। सलीम का एक पैर जमीन पर नहीं आता है अब ऐसी हालत में भी सिलाई की मशीन चलाता देखकर किसी माँ का हृदय तार-तार क्यों न हो जाये...। "स्यानी लड़की है, कोलिस्टोर में कैसे भेज दऊँ...? जमानौ ठीक नाँय मैं का करि लुंगी...।" इसी डर से रिहाना घर पर ही मोतियों की माला बनाने में जुटी रहकर शाम तक कुछ पैसा कमाने और सुबह शाम ताऊ के घर पर खाना पकाती है सिर्फ कुछ रोटियों के लिए। करना तो उसकी माँ भी कुछ ऐसा ही चाहती है लेकिन असमर्थ है।

तब वह बच्चों के पेट को डाँट-फटकार या कभी-कभी पिटाई व गालियों से भरकर सुलाने में मदद करती है। तब रिहाना इस तरह झल्लाने के अलावा कुछ नहीं कर पाती। कभी-कभी तो वह परेशान होकर मर जाना भी चाहती है किन्तु उसे इस कुनबे के सामने सिवाय अंधकार के कुछ भी तो नजर नहीं आता और अगले ही पल वह पूरी हिम्मत से खड़ी हो जाती है। मेरी माँ को हाथ में खाना लिए दरवाजे पर खड़ी देखकर रहीमा मुश्किल से उठकर आ सकी। मेरी माँ से यह खाना लेते वक्त रहीमा के हाथ काँप उठे थे।

उसने कनखियों से देखा कि बुन्दू की निगाह उसी पर थीं परन्तु क्या करे, बच्चों का पेट तो भर ही जाएगा यही सोचकर उसने झुकी निगाहों से खाना ले लिया। परन्तु खौं-खौं करती रहीमा जैसे किसी बोझ से दबी जा रही हो। उसका चेहरा कुछ ज्यादा ही मलिन हो गया था। मेरी माँ के संकोच न करने के आग्रह पर उसने अपने आप को संयत करने का असफल प्रयास किया। रहीमा ने मुड़कर एक नजर बुन्दू पर डाली। उसे भय था कि आज वह जरूर मार-पीट करेगा... किन्तु बुन्दू की लालच में चमकी नजरें सिर्फ रोटियों पर ही टिकी थीं। "ला रांणी जल्दी" उसने रहीमा के हाथ से खाना छीन लिया और खा पीकर वहीं सो रहा। रहीमा मन मसोस कर यह देखती भर रही गयी। सिवाय आँखों से आँसू टपकाने के वह चाह कर भी कुछ न कर सकी।

रोज की तरह उस दिन भी मैं समाचार पत्र को उलट-पलटकर कोई सार्थक खबर पढ़ने की तमन्ना में चाय की चुस्कियाँ भर रहा था कि "सर जी नमस्ते" यह अब्दुल था रिहाना के ताऊ का बड़ा लड़का। उम्र में रिहाना से लगभग तीन साल बड़ा। मेरी तरह उसका भी रोज का काम था मेरे पास बैठकर राजनैतिक खबरें पढ़ना और उन पर अपनी टिप्पणी करते हुए नेताओं को गरियाना और उनके द्वारा पब्लिक को बेवकूफ समझ कर दिये गये बयानों पर ठठाकर हँसना "साले उल्लू समझते हैं।" मगर उसने मुझे दोपहर को बुन्दू के घर आने का आमंत्रण देकर चौंकाया "आज कोयी खास बात है क्या...?" मैंने पूछ लिया, उसके चेहरे पर एक अजीब सी वितृष्णा फैलकर स्थाई हो गयी "अरे कुछ नहीं, मजबूरी है... कि पिताजी की नाक कटी जा रही है। उनकी मान-मर्यादा एकदम जाग गयी है... और भायपन भी... सो, साले इसी चाचा की लड़की की शादी करनी पड़ रही है... आज उसे देखने वाले आ रहे हैं।" अन्तिम शब्दों तक आते आते वह अन्दर से खौलने लगा था। "चलो कोई बात नहीं है... तुम इस लायक हो तो कर दो... आखिर बहन ही है।" मैंने कहकर उसे चलता किया।

दोपहर तक बुन्दू के घर का स्वरूप ही बदल गया था। रहीमा के बच्चों के चेहरे उस दिन फूलों की तरह खिले हुये थे। घर में बन रहे खाने की महक उनकी आँखों में उतरकर चमक रही थी। यही खाना आज उन्हें भी मिलने वाला था। इसी उमंग में वे इधर-उधर खुशी से उछल-कूद रहे थे। डेढ़ वर्षीय बच्ची को आज पेट भर दूध मिल गया था इसलिए उसकी उल्लासभरी किलकारी अपनी तरफ ध्यान आकर्षित कर रही थी। रहीमा को भी जैसे कोई बीमारी नहीं रह गयी थी। वह हँसती सी चूल्हे के पास बैठी कुछ पका रही थी। उसने रिहाना की नानी द्वारा दिये गये कपड़े पहन रखे थे। चमकीला सा हरे रंग का सलवार तथा उसी रंग का कुर्ता और चमकीला गोटा लगा दुपट्टा, आज रेगिस्तान में भी जैसे हरियाली की लहर दौड़ पड़ी थी। बदन में बनियान तथा गमछा लपेटे रज्जाक, पड़ौस से चारपाई पर बिछाने को चादर माँ गकर लाया था। कुछ झुँझलाया सा क्यों कि आज उसे कुछ हाथ-पैर हिलाने पड़ रहे थे, अपनी मर्जी के बिना। बुन्दू कहीं नजर नहीं आ रहा था। यही सवाल उस बूढ़ी औरत के मन में था जो रहीमा से पूछ रही थी "बुन्दू नाँय दिख रए का उनें पतौ नाँय?" रहीमा खाँसी के बाद लम्बी-लम्बी साँसों को संयत करते हुए बोली "बाय सब पतौए... परि कैसें आबैगौ? जेब में कछु होयगौ तबई तौ आबैगौ... शराब पीवे और सटटौ लगायवे ते फुरसत मिलै तबई तौ...?"

उसने पल भर में पति को गालियों के साथ न जाने क्या-क्या भला-बुरा कह डाला। उस बूढ़ी ने जैसे उसके अन्दर पति के लिए सुलगती चिंगारी को हवा दे डाली थी। रिहाना के ताऊ शमशुद्दीन के डाँटनें पर ही वह शान्त हुई। किन्तु उसके होंठ देर तक कुछ बड़बड़ाते रहे। रिहाना की भाभी ने रिहाना के केशों को सँवार कर आँखों में काजल लगा दिया था। एकदम हरे रंग के कपड़ों में लिपटी रिहाना के लाली लगे होंठ कश्मीर की हरी वादी में खिले हुए किसी फूल की पंखुडी से दिखने लगे। चेहरे पर काजल लगी आँखें फूलों पर आ बैठे भँवरे सी दिखने लगी। पूरी तरह से सजी सँवरी रिहाना की झुकी हुई निगाहें उसे और सुन्दर बना रहीं थीं। माँ से रहा न गया तो उठकर एक काला टीका रिहाना के माथे पर लगा दिया कि बेटी को नजर न लग जाय। रिहाना इससे पूर्व इस दिन की कल्पना भी नहीं कर पाई थी। बाप की गैर जिम्मेदारी के कारण घर की जिम्मेदारियों के बोझ को ढोते-ढोते, उसे समय ही कहाँ मिला था, युवा सपने संजोने का। अब अचानक आये इस दिन न जाने कैसी-कैसी उथल-पुथल उसके भीतर हो रही थी। उसके हृदय की घड़कनें बढ़ी हुई थीं। साँसे तेज चल रही थीं। इसे उसके उरोजों के उत्थान-पतन से महसूस किया जा सकता था। कोई अनचाहा डर उसके भीतर वैचारिक भूचाल खड़ा कर रहा था।

उसके मस्तिष्क पर रेखाएँ बन-बिगड़ रहीं थी। "कैसा होगा वह घर...? कैसे लोग होंगे...? उसका दूल्हा कैसा होगा...?" वह अपनी माँ के पति की कल्पना मात्र से ही सिहर उठती है। फिर अचानक उसके होंठ हल्की मुस्कान में फैलने लगे मन में कुछ गुदगुदी के साथ नयी तरंगे तरंगित होने लगीं जो उसके लिए बिल्कुल अनौखी और अंजान थी। वह मन के भीतर कहीं इस नारकीय घर से दूर, सपनों के एक ऐसे घर की बुनियाद रख रही थी जहाँ उसकी जिन्दगी भी सहेली वसीमा और किरण जैसी होगी। उसके सुख-दुख का ध्यान रखने वाला उसका पति होगा। दूर-दूर तक कोई दुख नहीं होगा। माँ की खांसी तथा छोटी बहन के रोने के सम्वेत स्वरों ने उसकी चेतना भंग कर दी। उसकी नजर माँ पर आकर ठहर गयी। आँखे लबालब भरी किसी झील सी नजर आने लगीं। "मम्मी तौ अब बैठिवेतेऊ परेसानै तौ जि इन बालकन्ने कैसैं समारैगी...? अब तौ बामै इतनी तागतिऊ नाँय बची कै बाबूए परे धकेलि कै खुदकूँ बचायले.... जि मर जाइगी... वैसैंऊ अकेलौ सलीम जा कुनबाए कब तक जियावैगौ?"

इन्हीं सब बातों को सोचते-सोचते उसकी आँखों का किनारा कहीं से टूट गया और पानी की बूँदें उसके गालों से लुढ़ककर उसके आंचल में दम तोड़ने लगीं। अचानक चार-पाँच स्त्री-पुरुषों के आते ही सब ऐसे सतर्क हो गए जैसे किसी मोर्चेबंदी पर हों। रिहाना को देखा जाने लगा "बेटा जरा खड़ी हो जाना।" लड़के का बाप बोला। रिहाना खड़ी हो गई। "जरा चलके तो दिखा।" लड़के की माँ ने पूरी तसल्ली कर ली कि वह लंगड़ी नहीं है। "बेटा चेहरे से ये घूंघट हटा के जरा चेहरा ऊपर हमारी तरफ तो कर।" लड़के के दादा जी अपना चश्मा ठीक करते हुए बोले थे। इस सबसे रहीमा को परेशान होता देख लड़के का बाप कह उठा "आप परेशान न हों ये सब तो होता ही है मट्टी का घड़ा भी ठोक-बजा के ही खरीदा जावै है।" आखिर में रिहाना उनको पसंद आ ही गई।

शाम धीरे-धीरे गहराने लगी थी। अब रहीमा कुछ चिन्तातुर लगने लगी थी उसकी मनः स्थिति ठीक नहीं थी। उसने अभी खाना भी नहीं खाया था। रिहाना ने माँ से कहा "मम्मी तू रोटी खाइलै।" "तू खाइलै मेरौ मन नांऐं।" रहीमा ने कहीं खोये हुए जबाब दिया। "अब काऐ रोटी खाय चौं नाँय रई।" रिहाना ने जिद की तो रहीमा जैसे झल्ला पड़ीद "मैं नाँय खाय रई मौय भूंख नाँय, तू खाय लै।" और उठकर कमरे से बाहर आ बैठी। दरअसल रहीमा बुन्दू को लेकर परेशान थी उसे पता था आज वह जान बूझकर सारा दिन घर नहीं आया है फिर जैसा भी है बुन्दू उसका पति है। इसलिए वह इस खुशी को पति के साथ बांटना भी चाहती है। अपने भीतर की इन

सब बहसों के बाद भी वह रिहाना को इस सब का एहसास भी नहीं होने देने में पूरी तरह सफल दिख रही थी।

गलियों में रात का सन्नाटा फैलने लगा तब बुन्दू के साथ ही शराब की चिरपरिचत गन्ध ने घर में प्रवेश किया। रहीमा कुछ कहने को थी कि बुन्दू के लड़खड़ाते शब्द फूटे "कर ले तू अपने मन की... वो... वो शादी करेगा मेरी लड़की की... मैं क्या मर गया हूँ... अरे मेरी लड़की है जब चाहूँगा तब करूँगा या कभी न करूँ वो कौन होता है... समझा, मेरी लड़की को बेचना चाहता है साला?... लड़की मेरी, पैसा तू गिनेगा... ये शादी नहीं हो सकती... तू सुन ले रांणी।" अन्तिम शब्दों के साथ ही उसने पत्नी को अपना फैसला सुनाया और एक कोने में जाकर पड़ गया। यह चीखना-चिल्लाना आज कुछ नया नहीं था।

शराब के नशे में पत्नी या बेटी को पीटना और चिल्लाना उसके लिए आम बात थी। बहाना कोई भी हो, चाहे सब्जी में नमक कम हो या ज्यादा, पत्नी जल्दी सो गई या देर तक क्यों नहीं सोई...। ऐसा लगता है जैसे उधार लेकर जुए में हार जाने पर उधारी वालों की गाली-गलौच की पूरी खीझ वह यहाँ घर में आकर उतारता है। इससे गली के लोग परेशान भी होते हैं मगर कोई उसके मुँह नहीं लगना चाहता। बुन्दू के इस फैसले से रहीमा कुछ बुदबुदाती सी सिसकने लगी थी। रिहाना का तो सपनों का पूरा महल ही रेत की तरह बिखर गया। उसे लगा बुन्दू ने उसके शीशे के मन पर कोई पत्थर दे मारा हो और उसकी किरचें भीतर चुभकर रिसने लगी हैं। रिहाना अपने ही मन के किसी कोने में छटपटाने लगी।

माँ की खाँसी की तरह उसके आँसुओं का भी कहीं अन्त नहीं हो रहा था। दिन भर की भूख ने इतना साहस भी नहीं छोड़ा था कि वह माँ को ढांढस बंधाती। वह साहस जुटा भी ले तो आखिर कहेगी क्या...? यह प्रश्न उसे भूख से कहीं ज्यादा अपाहिज किये हुये था क्योंकि भूख से लड़ने की ताकत तो उसको बचपन से ही मिल गई है। रिहाना जब पाँच साल की थी, रज्जाक को कूल्हे पर रखे घूमती रहती जब थक जाती और समझ लेती कि अब मम्मी ने रोटी पका ली होगी। वह घर आती। लेकिन जब कभी वह तरकारी और आटा फिंका हुआ देखती और बाप के हाथों माँ को पिटता देखती तब उसका मासूम मन यह तो नहीं समझ पाता था कि आखिर माँ का दोष क्या है? हाँ भूखे पेट करवटें बदलते आज ही की तरह रात काटने को मजबूर होना पड़ता था। रिहाना कमरे के बाहर पड़े छप्पर में रोज की तरह जमीन पर कुछा बिछा कर लेट गई। पास ही झूला हो चुकी चारपाई पर रहीमा आँखें मूंदे पड़ी थी। कभी-कभी उठती

खाँसी उसके जगे होने का एहसास करा देती थी। कमरे के कोने से उठते बुन्दू के खर्राटों की आवाज दोनों को बैचेन कर रही थी।

रहीमा के पिता ने रहीमा की शादी बुन्दू के नाम कुछ एकड़ जमीन के टुकड़े को देखकर कर दी थी। जब कि उन्हें यह पता चल गया था कि बुन्दू काम-धाम तो कुछ नहीं करता सिवाय नेताओं की रैलियों और जुलूसों में घूमने और आवारागर्दी के। वहीं उसमें यह सब गन्दी आदतें भी पनपी हैं। फिर भी उन्होंने यह सोचकर शादी कर दी थी कि चलो नेतागिरी तो करता है तो कुछ इधर-उधर करके कमा लेगा फिर जमीन भी है... और शादी के बाद जब वजन आ जाएगा तो सुधर जाएगा। बिना दान-दहेज के अच्छा घर भी मिल गया है। किन्तु शादी के बाद ही शहर जा बसने की जिद करके अपने हिस्से की जमीन बेचकर वह शहर चला आया। जमीन का पैसा उसके बुरे कर्मों में कुछ दिन ही साथ दे पाया तब तक रहीमा के आँगन में रिहाना और रज्जाक के रूप में दो पुष्प महकने लगे थे।

साथ ही उत्पन्न हुई थी बच्चों का पेट भरने और उनकी पढ़ाई-लिखाई के लिए खर्चे की समस्या रहीमा के रोज-रोज कहने और झगड़ने से तिलमिलाकर बुन्दू इन जिम्मेदारियों से और दूर भागने लगा। अब वह सुबह जो भी मिलता खाकर सुबह घर से निकलता और शाम को घर लौटता खाली हाथ लेकिन शराब पीकर। रहीमा दिन भर इन्तजार करती कि आज कुछ कमा लाएगा। शाम को बुन्दू को खाली हाथ देखती तो पड़ोसियों से कुछ माँग-मूँग कर कुछ पका लेती। रहीमा सोचती कि वह कमाता तो है तो क्या सब रुपयों की शराब पी आता है? रहीमा ने इस बात पर भी झगड़ना शुरु किया तो बुन्दू मारपीट पर उतारू हो आता "मादरचोद तुझसे कुछ माँ गता हूँ?" मगर रहीमा का यह भ्रम भी जल्दी ही टूट गया जब कुछ उधारी माँ गने वाले घर तक पहुँचकर रहीमा को ताकने लगे तब से बुन्दू घर में भी देर रात को आने लगा कि कोई देख न ले। अब पड़ोसियों का भी सब्र टूट गया सो उनके दरवाजे भी रहीमा के लिए बन्द हो गये।

रहीमा दोनों बच्चों की भूख से दुखी होकर पहली बार मजदूरी करने गयी थी। उस दिन शाम को घर की आवरू का हवाला देते हुए बुन्दू ने रहीमा को बहुत मारा था। इतनी पिटाई के बाद भी रहीमा ने अपनी कमाई के पैसों से दोनों बच्चों का पेट भरकर असीम शान्ति का अनुभव किया था। इसके बाद तो रहीमा की जैसे दिनचर्या ही बन गई थी कि सुबह से शाम तक हाड़तोड़ मेहनत के बाद पति की गाली-गलौज सुनना या पिटना ऊपर से पति की शारीरिक भूख को भी तृप्ति देना। रहीमा ने इसे

अपनी नियती मान लिया था। मासूम रिहाना इन क्रियाकलापों को देखती और समझने को अपने दिमाग पर जोर डालती जब कुछ समझ नहीं पाती तो सो जाती मगर आज रिहाना की आँखों से नीद कोसों दूर है। रिहाना की हालत एक ऐसे निर्दोष कैदी की सी हो रही है जिसे, जेल से रिहाई की खबर के बाद अचानक पुनः जेल में सड़ने का आदेश सुना दिया हो। इसी बेचैनी में उसकी नजर अपने कुनबे से होती हुई अपने बाप पर पहुँची जो नशे में बेसुध सो रहा था। न जाने क्यूँ रिहाना को उसका चेहरा किसी सांप का सा नजर आने लगा।

जिसके डर से उसका कुनबा कीड़े-मकोड़ों की तरह सिकुड़ा-सिमटा पड़ा है। दीये की मध्यम रोशनी में रिहाना को अपने पिता का चेहरा और ज्यादा डरावना दिखने लगा और उसने घबराकर आँखे बन्द कर लीं। वह कुछ अच्छा सोचना चाहती थी लेकिन, उसे बचपन की वह रात बार-बार याद आ रही थी। वह आठ वर्ष की थी, और सिर्फ इतना जान पाई थी कि पूरे रोजे रखने पर ईद पर नये कपड़े मिलते हैं। इसी तमन्ना में उसने पूरे तीस रोजे रखे थे। वह ईद की चाँद रात थी, जब रिहाना ने बाप से पहली बार कुछ बोलने की हिम्मत जुटाई थी "बाबू मैंने पूरे रोजे रखे हैं ईद पै नए कपड़ा पहरुंगी।" "ला हरामखोर पहले तुझे पोशाक पहना दूँ।" बाप की इस गाली के साथ उसे इतनी मार खानी पड़ी थी कि वह रात भर माँ के आंचल में मुँह छिपाये सिसकती रही थी। वह चाह कर भी बाप की तरफ देखने का साहस तब भी कहाँ जुटा पाई थी। उसके बचपन का वह डर घृणा में बदल गया था जब उसने इसी छोटे से कमरे में मेहनतकशी से टूटी हुई माँ के साथ अपने बाबू को जबरदस्ती करते देखा था। अपने पति के सामने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाती माँ कितनी बेबस नजर आती थी। रिहाना मूकदर्शक बनी उसे देखती रहती थी। कभी-कभी उसका मन करता था कि वह अपने बाबू को धक्का मारकर बाहर निकाल दे मगर, मन के कोने में बैठा डर उसे ऐसा करने से रोकता था। जब बड़ी होने लगी तो वह आत्म-ग्लानि से आँखे मूँद लेती थी किन्तु, पिता के हाँफने की आवाज और माँ की सुबकियाँ उसे देर तक विचलित करती रहती थीं। माँ को टी.बी. हो गई। भाई अपाहिज हुआ। इन्हीं स्मृतियों में खोये-खोये ही न जाने कब उसकी आँख लग गई।

रिहाना की शादी टूटने के बाद, दिनभर मेहनत, सुबह शाम खाना पकाना, रात को माँ की लगातार खाँसी और उनींदी आँखों के अलावा बाप की निर्लज्जता के खर्राटे सुनते न जाने कब एक वर्ष बीत गया। इस एक साल में वैसे तो कुछ नहीं बदला, लेकिन रिहाना का चेहरा, अगले दस वर्षों के बराबर तरक्की कर चुका था। रिहाना अब उन औरतों की चर्चाओं का हिस्सा बन गई थी जो रेड लाइट एरिया की तरह, दोपहर में

बन ठन कर बिना किसी काम के घरों के दरवाजों पर बैठी बतियाती रहती हैं। इन चर्चाओं में वे रिहाना के चरित्र को लेकर चटखारे भरती और गरामागरम बहसें करतीं। ऐसी बे सिर पैर की बातें जब रहीमा को सुनने को मिलतीं तो रहीमा का चेहरा अपाहिजपन से खिन्न हो उठता। रिहाना की बेचारगी उसके चेहरे को ढंक लेती उसको लगता उसके हृदय को कोयी मुटठी में दबाकर निचोड़ रहा है। लड़कों को जैसे कोई काम ही नहीं रह गया था सिवाय रिहाना पर नजरें गढ़ाने के। रिहाना को यह नजरें नोंचती सी लगतीं। रहीमा को कोसों तक कोयी रास्ता नजर नहीं आता कहाँ जाऊँ...? किसके पैर पकड़ूँ? किससे कहूँ ...? सोचते-सोचते रहीमा एक बार फिर रिहाना के ताऊ के घर पहुँची। यह सोचकर कि उनके पैर पकड़ लूँगी तो शायद उन्हें कुछ रहम आए।

शमशुद्दीन के पैर पकड़ कर रहीमा रो पड़ी थी "मैं तौ औरतूँ पराई समजौ मेरौ काऐ परि जि तौ तुमारे खानदान की इज्जतै अबके कैसैऊ करौ...!" कहते-कहते वह खाँसने लगी और देर तक खाँसती रही। पत्नि के नाक-भौं सिकुड़े देखकर शमशुद्दीन खुलकर तो कुछ नहीं बोले "चल-चल मैं देखुँगौ... तू जा।" रहीमा इतना सुनकर संतोष से भर गई थी।

शमशुद्दीन उन दिनों अपने छोटे बेटे की नौकरी को लेकर परेशान थे। उसे उन्होंने जैसे-तैसे दे दिलाकर हाईस्कूल पास करा दिया था। कद-काठी का ठीक था इसलिए फौज की भर्ती देखने गया था। वहाँ वह शारीरिक परीक्षा में तो पास हो गया मगर लिखित परीक्षा में औकात सामने आ गयी। अब शमशुद्दीन के पास न तो पैसा था रिश्वत देने को और न ही कोयी बड़ी सिफारिश, इसलिए घर बैठा बेटा उन्हें अपनी छाती पर रखा बोझ सा लग रहा था। अब शमशुद्दीन की भाग-दौड़ इसी के लिए हो रही थी कि कहीं छोटी-मोटी कैसी भी हो, सरकारी नौकरी लग जाय।। एक दिन शाम को शमशद्दीन खुश मगर किसी उधेड़बुन में घर पहुँचे "हज्जो"! पत्नी को आवाज दी पत्नी पास आ गयी।

"आज एक रिश्तेदार मिले।"

"कौन से... ?" पत्नि ने बीच में ही बात काट दी

"तू नहीं जानती... और मैं भी नहीं जानता था... बातों-बातों में रिश्ता निकल आया।"

"तौ फिर... !" हज्जो की उत्सुकता बढ़ गयी।

"कह रहे थे जल निगम में जुगाड़ है नौकरी लगवा देंगे लेकिन... एक बात और कही ढंग से मेरी समझ में नहीं आयी....।"

"क्या... ? हज्जो की आँखें गोल-गोल फैल गयीं।

"कह रहे थे लड़कियाँ कम हो रही हैं। लड़के की शादी में दिक्कत आ रही है... फिर बोले कोयी लड़की हो तो मेरे लड़के की शादी करवा दो... तुम्हारे लड़के की नौकरी तो समझो लग गयी।" शमशुद्दीन सब बातें एक साँस में बोल गये।

"शादी कहाँ से करवा दें...?" हज्जो परेशान होकर बोली।

"अपनी रिहाना से करवा देते हैं... उस पर ऐहसान भी हो जायेगा और अपना भी काम...।" शमशुद्दीन की इस बात से दोनों के चेहरों पर एक साथ मुस्कान तैर गयी। शमशुद्दीन तो जैसे वहीं से सारी बातें पक्की करके ही आये थे। वे तो बस हज्जो के मन की बात जानना चाह रहे थे। दूसरे ही दिन रहीमा को भी शादी की दिन तारीख बता दी गई। यह सब इतना गुपचुप हुआ था कि बुन्दू को खबर न लग जाय। इस बार शमशुद्दीन रिहाना की शादी का टल जाना नहीं चाह रहे थे। क्योंकि शादी में ही बेटे की नौकरी छिपी थी। उन्होंने रिहाना की शादी की तैयारी अपने घर पर पूरी करवाई। शादी से दो दिन पहले रहीमा अपने कुनबे के साथ शमशुद्दीन के घर आ गयी थी। अब बुन्दू भी कुछ नहीं कर पा रहा था।

सुबह से ही परिवारीजन बारात आगमन की तैयारियों में व्यस्त थे। रहीमा, शमशुद्दीन और उनकी पत्नी हज्जो की तारीफें करते नहीं थक रही थी। उसके लिए तो शमशुद्दीन अल्लाह का भेजा फरिश्ता बन गये थे। बुन्दू उदासी का आवरण ओढ़े थके कदमों से इधर-उधर घूम रहा था। आज वह नशे में नहीं था। वह लोगों से नजरें चुराना चाह रहा था कि लोग उससे उसकी उदासी का कारण न पूछ बैठें। इसलिए अपनी उदासी को छुपाने के लाख प्रयासों के बाद भी उसकी सारी कोशिशें बेकार साबित हो रही थीं। अन्दर कमरे में बैठी तन्हा रिहाना युवा मन के पंख फैलाकर कल्पना लोक में उड़ रही थी। यहाँ उसे बाप के आतंक का कोयी डर नहीं था। वह पी मिलन से पूर्व सपनों के समुद्र में डूबक लगा रही थी "अब मैंऊँ वसीमा की तरै मैंगे कपड़ा पैरकैं सजी-धजी कबऊ-कबऊ आऔ करुँगी। कोहनी तक चूड़ी और ऊँची ऐड़ी की सैंडिल मोयपेऊ होइगी।" युवा मन मचल रहा था उस अजनबी से मिलने को जो अपनी बाँहों में समेट लेगा उसके सम्पूर्ण अस्तित्व को और वह बचपन से अब तक की सारी पीड़ा एक पल में भुला देगा। "मैं चैन की नींद सोउँगी और जगुंगी। मैं जब

रूठ जाउँगी तो वु अपनी उँगरियन तै मेरी ठोड़ी पकरिकै ऊपर उठाय कै मोय मनावैगौ।" यहाँ उसने हमेशा छोटे भाई-बहनों को मनाया ही था, अगर वह कभी रूठी, तो उसे किसी ने मनाया हो उसे याद नहीं पड़ता। बचपन में बाल हठ में रूठने पर दिन भर काम में भूखी लगी रहने के बाद उसके भूखे पेट की टीस ही उसे मान जाने को मजबूर करती थी। रिहाना अचानक रूँआसी हो गयी जब उसकी नजर धौंकनी सी चलती साँसों को नियंत्रित करने का असफल प्रयास करती माँ पर पड़ी जो ढाई वर्षीय बच्ची को चुप करने की कोशिश में थी। रिहाना भी उस माँ के बड़े परिवार में से एक है। कभी-कभी वह सोचती थी कि अगर उसके भाई-बहन कम होते तो हमें यूँ भूखे पेट ठण्ड से ठिठुरकर रातें नहीं काटनी पड़तीं। और मम्मी भी इतनी जल्दी न बूढ़ी होती और न बीमारी होती। वह कर भी क्या सकती थी सोचने के अलावा... ?

बैंड-बाजों की आवाज पास आती गई और बारात आँगन में आ गयी। बारात देखने के लिए औरतें छत पर जाने लगी। रिहाना भी छत पर जा पहुँची अपने सपनों के राजकुमार को देखने। वह अवाक् रह गयी, एकदम जड़, जैसे पत्थर में तब्दील हो गई हो। उसकी नजर अपने से लगभग छह वर्ष उम्र में छोटे एक असुन्दर से लड़के पर थी जो घोड़े पर सवार उसे ब्याहने आया है। उसके चेहरे से बचपन की परत भी पूरी तरह से हठ नहीं पायी थी। बैण्ड बाजों की आवाज शान्त हो गयी। औरतें लड़कियाँ रिहाना को साथ लेकर नीचे आने लगी। रिहाना को लगा उसका एक-एक पैर सौ-सौ मन का हो गया है जो पूरी ताकत से उठ पा रहा है। उसका मन दहाड़े मारकर रोने को हो रहा था। आखिर भरे मन से ही सही निकाह हो गया। विदाई हो रही थी। रिहाना अपने अन्दर उठ रहे बबण्डर को रोक नहीं पा रही थी। आज वह जी भर रो लेना चाह रही थी। उसके धैर्य का बाँध टूट चुका था। उसकी आँखों से जैसे झरना फूट पड़ा था जिसमें उसके सारे सपने बह रहे थे। रिहाना का दुख जैसे सबकी आँखों में आँसू बनकर उतर आया था। हृदय द्रवित हो रहे थे।

रिहाना रोते हुए अपने बाबू को पुकार रही थी। वह अपने बाबू से शिकायत करना चाहती थी अपने भविष्य की जिन्दगी के साथ हुए इन्साफ की। वह बाबू को अपने आँसू पौंछने को बुला रही थी। सभी ने बुन्दू को रिहाना के पास जाने को कहा मगर वह साहस नहीं जुटा पा रहा था रिहाना को गले लगाने का। बुन्दू गली के छोर पर खड़ा भरी आँखों से कुछ बड़बड़ाता सा दूर जाती रिहाना को देखता रहा था।

अपने भाग्य पर कुदरत की एक और चोट समझकर रिहाना नये घर में खुद को खुश रखने के पूरे प्रयास में जुट गयी। वह अपनी स्मृति में बीते जीवन की एक भी छाया

नहीं रहने देना चाहती थी। बहुत जल्दी ही उसने अपनी मेहनत और प्रेम से घर वालों का दिल भी जीत लिया और वह खुश रहने लगी। जैसे उसे जन्नत मिल गई किन्तु उसका यह मिथक जल्दी ही टूट गया जब एक रात उसका पति शराब के नशे में घर लौटा। रिहाना का कलेजा धक से रह गया। वह कुछ समझ पाती कि वह किसी बहसी की तरह उस पर टूट पड़ा। रिहाना के प्रतिरोध करने पर उसने एक थप्पड़ रिहाना के मुँह पर जड़ दिया और जोर जबरदस्ती के बाद ठण्डा होकर सो गया। रिहाना देर तक बैठी फफकती रही। सोते हुए पति में उसे अपने बाप की शक्ल दिखाई देने लगी। उसके बाद तो जैसे यह रोज का क्रम ही बनने लगा। वह किसी से शिकायत भी नहीं कर सकती थी पति की धमकी के कारण उसने पहले ही दिन कह दिया था "किसी से शिकायत की तो बोटी-बोटी कर दूँगा।" एक दिन रोटी लेकर जाते समय रिहाना ने अपनी सास को अपने पति से कहते सुना "देख रहे हो कल वह टी.बी. का स्टेपलाइजर बेचकर रात को भी पीकर आया था।" शराब पीकर आने की तो वह जान गई थी घर चीजें बेचकर पीता है यह सुनते ही रिहाना के पैरों तले की जमीन खिसकने लगी।

उसका दिल धड़धड़ाकर बाहर आने को हुआ। पूरे दिन किसी भी काम में उसका मन नहीं लगा। शाम को रिहाना का ससुर अपने पुत्र को डाँट रहा था "अगर तू अपनी हरकतों से अब भी बाज नहीं आया तो इस घर में तेरे लिए कोयी जगह नहीं है।" उसने चेतावनी दी थी। रिहाना का पति प्रतिवाद कर रहा था "घर में से मेरा हिस्सा मुझे दे दो चला जाऊँगा।" किवाड़ की आड़ में खड़ी रिहाना यह सब एक बेबस प्रतिमा की भाँति सुन व देख रही थी। उसके हाथ-पैर जैसे निर्जीव होते जा रहे थे। उसे अपना अतीत अट्टाहास करता महसूस हो रहा था। अचानक रिहाना का चेहरा पथराने लगा जैसे उसने कोई फैसला किया हो।

दूसरे दिन वह माँ की याद आने का बहाना बनाकर मायके आ गयी। रिहाना का पति रिहाना को बुलाने आया तो रिहाना ने जाने को मना कर दिया। कुछ दिनों के बाद रिहाना का ससुर कुछ अन्य लोगों के साथ, रिहाना को समझा बुझाकर वापस बुलाने आया, तब भी रिहाना ने साफ मना कर दिया। सभी ने उसे समझाया भी किन्तु उसने अपनी हठ नहीं छोड़ी। रिहाना के आँगन में यहाँ-वहाँ के लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। सौ लोग सौ-बातें वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। सभी रिहाना से ससुराल न जाने का कारण जानना चाह रहे थे। उसे मजबूर किया तो रिहाना फफक कर रो पड़ी जो अब तक सिर झुकाये सिमटी बैठी थी। अचानक रोते-रोते जैसे चीखी

थी वह "बस... अब एक और रिहाना नहीं।" इतना कहा उसने और रोती हुई वापस बुन्दू के कुनबे में समाहित हो गयी।

—— X ——